Original Research Paper

Volume : 5 | Issue : 11 | November 2016 • ISSN No 2277 - 8179 | IF : 3.508 | IC Value : 69.48

Social Science

KEYWORDS:

vkpk;l vdyd nio volfi.kh dky

डॉ. षिवांगना षर्मा — व्याख्याता संस्कृत विभाग भगवानदास राजकीय स्नातकोत्तर वि वविद्यालय, महाविद्यालय, चिमनपुरा षाहपुरा जिला–जयपुर (राज.)

षोधार्थी नेमीचंद जैन — संस्कृत विभाग। राजस्थान जयपुर (राज.)

¼1½ l"kekl"kek ¼& सुषमासुषमा काल में भूमि रज, धूम, अग्नि और हिम से रहित तथा कण्टक, अभ्रशिला (बर्फ) आदि एवं बिच्छु आदि कीड़ों उपसर्गों से रहित होती है। इस काल में निर्मल दर्पण के सदृश और निन्दित द्रव्यों से रहित दिव्य बालू, तन, मन और नयनों को सुखदायक होती है। कोमल घास व फलों से लदे वृक्ष। कमलों से परिपूर्ण वापिकाएँ। सुन्दर भवन। कल्पवृक्षों से परिपूर्ण पर्वत। रत्नों से भरी पृथ्वी तथा सुन्दर नदियाँ होती है। स्वामी भृत्य भाव व युद्धादिक का अभाव होता है तथा विकलेन्द्रिय जीवों का अभाव होता है। दिन–रात का भेद शीत व गर्मी की वेदना का अभाव होता है, परस्त्री व परधन हरण नहीं होता। यहाँ मनुष्य युगल–युगल उत्पन्न होते है।

¼2½ l"kek ¼& इसका प्रमाण तीन कोड़ाकोड़ी सागरोपम है। उत्तम भोगभूमिवत् मनुष्य व तिर्यंच होते है। शरीर समचतुरस्त्र संस्थान से युक्त होता है। आहार में तीसरें दिन अक्ष (बहेड़ा) फल के बराबर अमृतमय आहार को ग्रहण करते हैं। इस काल में उत्पन्न हुए बालकों के शय्या पर सोते हुए अपने अंगूठे के चूसने में पाँच दिन व्यतीत होते है। पश्चात् उपवेशन, अस्थिरगमन, स्थिरगमन, काला गुण प्राप्ति, तारूण्य और सम्यक्त्व ग्रहण की योग्यता इनमें से प्रत्येक अवस्था में उन बालकों के पाँच–पाँच दिन जाते है शेष वर्णन सुषमासुषमा के समान है।

¼3½ l"kek n"kek ¼& उत्सेधादि के क्षीण होने पर सुषमादुषमा काल प्रवेश करता है। उसका प्रमाण दो कोड़ा–कोड़ी सागरोपम है। इस काल में शरीर की ऊँचाई दो हजार धनुष प्रमाण तथा एक पल्य की आयु होती है। एक दिन के अन्तराल से आँवले के बराबर अमृतमय आहार को ग्रहण करते है। इस काल में बालकों के शय्या पर सोते हुए सात दिन व्यतीत होते हैं। इसके पश्चात उपवेशनादि क्रियाओं में क्रमशः सात–सात दिन जाते हैं। कुछ कम पल्य के आठवें भाग प्रमाण तृतीय काल के शेष रहने पर प्रथम कुलकर उत्पन्न होता हैं। फिर क्रमशः चौदह कुलकर तथा लोक प्रसिद्ध त्रेसठ शलाका पुरुष उत्पन्न होते हैं। शेष वर्णन सुषमा (सुषमसुषमा) काल के समान हैं।

¼4½ n"kekl"kek ¼& ऋषभनाथ तीर्थंकर के निर्वाण होने के पश्चात् तीन वर्ष और साढ़े आठ मास के व्यतीत होने पर दुषमा सुषमा नामक चतुर्थकाल प्रविष्ट हुआ। इस काल में शरीर की ऊँचाई पाँच सौ पच्चीस धनुष प्रमाण थी। इसमें शलाका पुरुष व कामदेव होते हैं।

¼5½ n"kek ¼& वीर भगवान का निर्वाण होने के पश्चात् तीन वर्ष आठ मास और एक पक्ष के व्यतीत होने पर दुषमाकाल प्रवेश करता है। इस काल में उत्कृष्ट आयु कुल 120 वर्ष और शरीर की ऊँचाई सात हाथ होती है। इस काल में श्रुततीर्थ जो धर्म प्रवर्तन का कारण है वह 20317 वर्षों में काल दोष से हीन होता होता व्युच्छेद को प्राप्त हो जाएगा। इतने मात्रा समय तक ही चातुर्वर्ण्य संघ रहेगा। इसके पश्चात् नहीं। मुकुटधारी में अन्तिम चन्द्रगुप्त ने दीक्षा धारण की। इसके पश्चात् मुकुटधारी प्रव्रज्या को धारण नहीं करते। इस काल में राजवंश क्रमशः न्याय से गिरते–गिरते अन्यायी हो जाते है। अंत आचारांग धरों के 275 वर्ष पश्चात् एक कल्की राजा हुआ। जो कि मुनियों के आहार पर भी शुल्क माँगता है। तब मुनि अन्तराय जान निराहार लौट जाते हैं। उस समय उनमें किसी एक को अवधिज्ञान हो जाता है। इसके पश्चात् कोई असुरदेव उपसर्ग को जानकर धर्मद्रोही कल्की को मार डालता है। इसके 500 वर्ष पश्चात् एक उपकल्की होता है ओर प्रत्येक 1000 वर्ष पश्चात् एक कल्की होता है। प्रत्येक कल्की के समय मुनि को अवधिज्ञान उत्पन्न होता है और चातुर्वर्ण्य भी घटता जाता है।

इस काल में चाण्डालादि ऐसे बहुत मनुष्य दिखते हैं। इस प्रकार से इक्कीसवाँ अन्तिम कल्की होता है। उसके समय में वीरांगज नामक मुनि, सर्वश्री नामक आर्यिका तथा अग्नि दत्त और पंगुश्री नामक श्रावक युगल होते है। उस राजा के द्वारा शुल्क माँगने पर वह मुनि उन श्रावक श्राविकाओं को दुषमा काल का अन्त आने का सन्देश देता है। उस समय मुनि की आयु कुल तीन दिन की शेष रहती है। तब वे चारों ही संन्यास मरण पूर्वक कार्तिक कृष्ण अमावस्या को यह देह छोड़ कर सौधर्म स्वर्ग में देव होते है। उस दिन क्रोध को प्राप्त हुआ,असुर देव कल्की को मारता है और सूर्यास्त के समय में अग्नि विनष्ट हो जाती है। इस प्रकार धर्मद्रोही 21 कल्की एक सागर आयु से युक्त होकर धर्मा नरक में जाते है।

¼6½ vfrn"kek ¼n"kekn"kek½ ¼& 21 वें कल्की के पश्चात तीन वर्ष, आठ मास और एक पक्ष के बीत जाने पर महाविषम वह अतिदुषमा नामक छठा काल प्रविष्ट होता है। इस काल के प्रदेश में शरीर की ऊँचाई तीन अथवा साढे तीन हाथ और उत्कृष्ट आयु 20 वर्ष प्रमाण होती है। धूम वर्ण के होते हैं। उस काल में मनुष्यों का आहार मूल, फल और मत्स्यादिक होते है। इस समय वस्त्र वृक्ष और मकानादि मनुष्यों को दिखाई नहीं देते। इसलिए सब नंगे और भवनों से रहित होकर वनों में घूमते हैं। मनुष्य प्रायः पशुओं जैसा आचरण करने वाले, क्रूर, बहिरे, अन्धे, काने, गूंगे, दारिद्रय एवं क्रोध से परिपूर्ण, दीन, बन्दर जैसे रूपवाले कुबड़े, बौने शरीर वाले नाना प्रकार की व्याधि वेदना से विकल दुर्गन्धयुक्त शरीर एवं केशों से संयुक्त, जूं तथा लीख आदि से आच्छन्न होते है। इस काल में नरक और तिर्यंचगति से आये हुए जीव ही यहाँ जन्म लेते है तथा यहाँ से मरकर घोर नरक व तिर्यचगति में जन्म लेते है। दिन प्रतिदिन उन जीवों की ऊँचाई, आयु और वीर्य दीन होते जाते है। उनचास दिन कम इक्कीस हजार वर्षों के बीत जाने पर जन्तुओं को भयदायक घोर प्रलय काल प्रवृत होता है।

उत्सर्पिणी काल :– जिस काल में बल, आयु व उत्सेध का उत्सर्पण अर्थात् वृद्धि होती है वह उत्सर्पिणी काल है।

mRlfi.kh dky d "kV Hkn dk fo'k"k Lo:Ik &

¼1½ n"kekn"kek ¼& इस काल में मनुष्य तथा तिर्यंच नग्न रहकर पशुओं जैसा आचरण करते हुए क्षुधित होकर वन प्रदेशों में बतूरा आदि वृक्षों के फल, मूल एवं पत्तें आदि खाते है। शरीर की ऊँचाई एक हाथ प्रमाण होती है। इसके आगे तेज, बल, बुद्धि आदि सब काल स्वभाव से उत्तरोत्तर बढ़ते जाते हैं। इस प्रकार भरतक्षेत्र में 21000 वर्ष पश्चात् अतिदुषमा काल पूर्ण होता है।

¼2½ n"kek ¼& इस काल में मनुष्य–तिर्यंचों का आहार 20,000 वर्ष तक पहले के ही समान होता है। इसके प्रारम्भ में शरीर की ऊँचाई 3 हाथ प्रमाण होती है। इस काल में एक हजार वर्षों के शेष रहने पर 14 कुलकरों की उत्पत्ति होने लगती है। कुलकर इस काल के म्लेच्छ पुरुषों को उपदेश देते है।

¼3½ n"kekl"kek ¼& इसके प्रारम्भ में शरीर की ऊँचाई सात हाथ प्रमाण होती है। मनुष्य पाँच वर्गवाले शरीर से युक्त, मर्यादा, विनय एवं लज्जा से सहित सन्तुष्ट और सम्पन्न होते है। इस काल में 24 तीर्थंकर होते है। उनके समय में 12 चक्रवर्ती, नौ बलदेव, नौ नारायण, नौ प्रतिनारायण हुआ करते है। इस काल के अन्त में मनुष्यों के शरीर की ऊँचाई पाँच सौ पच्चीस धनुष होती हैं।

¼4½ l"kekn"kek ¼& इसके पश्चात् सुषमादुषमा नामक चतुर्थ काल प्रविष्ट होता है। उस समय मनुष्यों की ऊँचाई पाँच सौ धनुष प्रमाण होती है। उत्तरोत्तर आयु और ऊँचाई प्रत्येक काल के बल से बढ़ती जाती है। उस समय यह पृथिवी जघन्य भोगभूमि कही जाती है। उस समय वे सब मनुष्य एक कोस ऊँचे होते है।

¼5½ l"kek ¼& उस काल के प्रारम्भ में मनुष्य, तिर्यचों की आयु व उत्सेध आदि सुषमादुषमा काल के अन्तवत् होता है, परन्तु काल स्वभाव से वे उत्तरोत्तर बढ़ती जाती है। उस समय नर नारी दो कोस ऊँचे, पूर्ण चन्द्रमा के सदृश्य मुखवाले विनय एवं शील से सम्पन्न होते हैं।

¼6½ l"kekl"kek ¼& तदन्तर सुषमासुषमा नामक छठा काल प्रविष्ट होता है। उसके प्रवेश में आयु आदि सुषमाकाल के अन्तवत् होती है। परन्तु काल स्वभाव के बल से आयु आदि बढ़ती जाती है। उस समय यह पृथ्वी उत्तम भोगभूमि के नाम से सुप्रसिद्ध है। उस काल के अन्त में मनुष्यों की ऊँचाई तीन कोस होती है। वे बहुत परिवार की विक्रिया करने में समर्थ ऐसी शक्तियों में संयुक्त होते हैं।

अवसर्पिणी काल के छः भेदों में क्रम से जीवों की वृद्धि होती जाती है जो उत्सर्पिणी के पहले तीन कालों में भी पहले के समान ही रहते है। परन्तु उत्सर्पिणी के चतुर्थ काल के प्रथम समय मे कल्पवृक्षों की क्रमिक वृद्धि प्रारम्भ हो जाती है जीवों की क्रमिक हानि होनी प्रारम्भ हो जाती हैं। ये उत्सर्पिणी आदि षट्काल भरत व ऐरावत क्षेत्रों में ही होते हैं।

lUnHk xUFk lph

1. राजवार्तिक 1/9
2. डा. नेमीचन्द शास्त्री –''तीर्थकंर महावीर और उनकी आचार्य परम्परा''खण्ड–2, पृष्ठ 421
3. आचार्य जिनसेन– ''आदिपुराण''–21/98
4. नियमसार /तात्पर्य वशत्ति गाथा संख्या/91
5. मोक्ष पाहुड़/मूल /गाथा संख्या 37, माणिकचन्द्र ग्रन्थमाला, मुम्बई, विक्रम सं. 1977
6. द्रव्य संग्रह /मूल/46/देहली, 1953 ई.
7. पद्म नन्दि पंचविशतिंका अधिकार सं./1/72/ जीवराज ग्रन्थमाला, शोलापुर, 1932 ई.